गरीबी और भाग्यवाद का सहसम्बन्ध

१९६२

चौधरी चरण सिंह

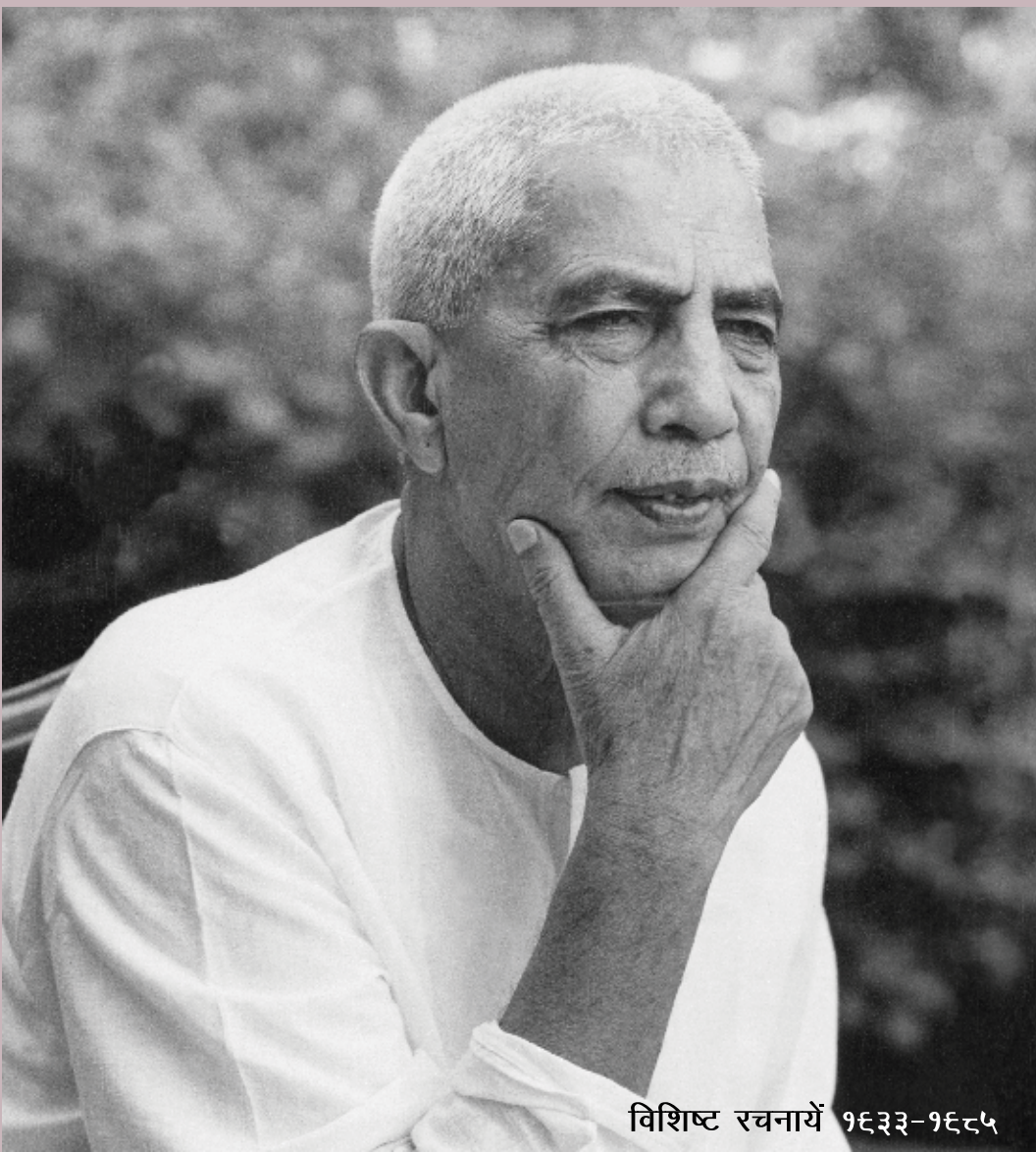

विशिष्ट रचनायें १९३३-१९८५

२६ जनवरी २०२२
चरण सिंह अभिलेखागार द्वारा प्रकाशित
www.charansingh.org
info@charansingh.org

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन को केवल पूर्व अनुमति के साथ
पुनः प्रस्तुत, वितरित या प्रसारित किया जा सकता है।
अनुमति के लिए कृपया लिखें info@charansingh.org

अक्षर तथा आवरण संयोजन राम दास लाल
सौरभ प्रिंटर्स प्राइवेट लिमिटेड, ग्रेटर नोएडा, भारत द्वारा मुद्रित।

चरण सिंह के पिता मीर सिंह तथा माता नेत्र कौर, १९५०

चरण सिंह का जन्म २३ दिसंबर १९०२ को "एक साधारण किसान के यहां छप्पर छवाये मिट्टी की दीवारों से बने घर में हुआ था, जहां आंगन में एक कुंआ था, जिसका पानी पीने और सिंचाई के काम आता था।"[1] संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) के मेरठ जिले के नूरपुर गांव में एक पट्टेदार गरीब किसान की कच्ची मढ़ैया में पैदा हुआ यह शिशु आज़ाद भारत में देहात की बुलंद आवाज बना।

---

* चरण सिंह के अपने शब्दों में

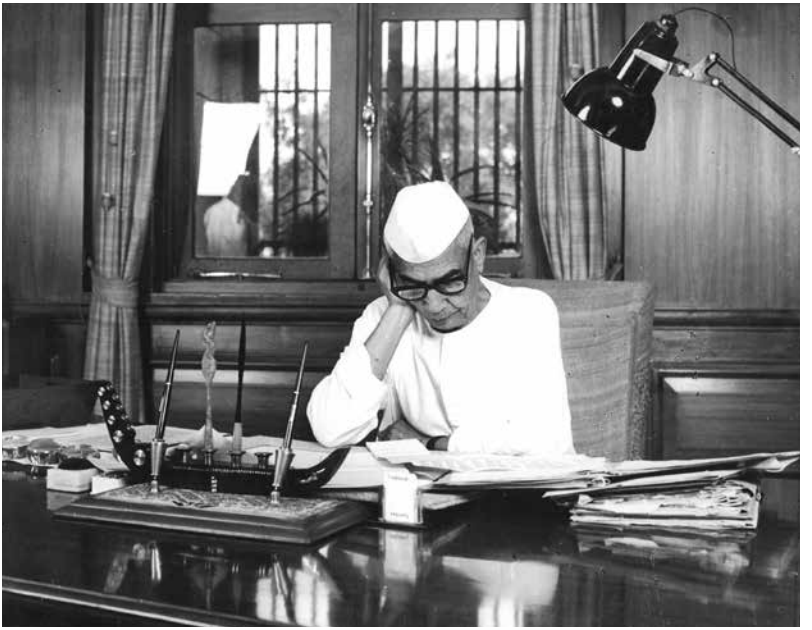

चौधरी चरण सिंह
भारत के प्रधान मंत्री। दिल्लीं, १९७९

ग्रामीण भारत के जैविक बुद्धिजीवी

१
गरीबी और भाग्यवाद का सहसम्बन्ध

चौधरी चरणसिंह के अनुसार देश के अधिकांश लोग अपने भाग्य या किस्मत से संतुष्ट हो जाते हैं और इस तथ्य पर विश्वास नहीं करते कि वे अपने भाग्य के स्वयं निर्माता हैं। परिणाम यह है कि हमारा समाज अत्यधिक भाग्यवादी हो गया है और गरीबी की वृद्धि में यह स्थिति सहायक रही है। चौधरी साहब ने इस लेख में स्पष्ट किया है कि यदि देश को समृद्धिशाली बनाना है, तो लोगों की मौजूदा सामाजिक और आर्थिक अभिवृत्तियों में परिवर्तन करना होगा।[1]

हमारे देश के नेताओं का यह परम और पुनीत कर्तव्य है कि वे जनता को सोते से जगाएं और शिक्षित नवयुवकों का यह दायित्व है, विशेषकर उन नवयुवकों का, जो गांवों से आए हैं, कि वे इस आन्दोलन के सिपाही बनकर काम करें और महानता तथा समृद्धि के भव्य भवन की आधारशिला बनें, जैसा कि कभी हमारा देश था और जिसे हम एक बार फिर शानदार देश बनाने का स्वप्न देख रहे हैं। लेकिन यह कोई आसान काम नहीं है, क्योंकि इसके लिए यह आवश्यक है कि हमारे लोगों की अभिवृत्तियों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो यथा–राष्ट्रीय स्तर पर मनोवैज्ञानिक परिवर्तन।

मानसिक अभिवृत्ति

कतिपय लोगों का यह विचार है कि यदि भारत मुगल साम्राज्य के पतन के बाद फूट का शिकार न बना होता और प्रतिद्वन्द्वी दलों में विभाजित न हुआ होता तथा बाद में भी ब्रिटिश सत्ता का गुलाम बनकर विदेशी

---

[1] इस लेख की सामग्री चौधरी चरणसिंह की पुस्तक–'इण्डियाज पॉवर्टी एण्ड इट्स सोल्यूशन', एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६२ से ली गई है।

आर्थिक शोषण से आक्रांत न होता, तो भारत पश्चिमी देशों के अनुरूप आर्थिक प्रगति कर लेता लेकिन ऐसा सोचना ठीक नहीं है, क्योंकि किसी देश की राजनीतिक स्वतंत्रता और स्थायित्व उसकी आर्थिक प्रगति का एक कारण तो हो सकता है, और होता भी है लेकिन यह केवल एक मात्र कारण नहीं हो सकता।

एशिया में ईरान व थाइलैंड दो ऐसे देश हैं, जहां राजनीतिक स्थायित्व भी रहा और वे यूरोपीय उपनिवेशवाद से भी बचे रहे। फिर भी, उनका गरीबी और अभाव का स्तर भारत और उसके भूतपूर्व उपनिवेशी पड़ोसी देशों जैसा है। यही तर्क प्राकृतिक संसाधनों और या पूंजी की उपलब्धता अथवा अनुपलब्धता के बारे में सत्य है। एक ओर इंग्लैंड और दूसरी ओर आधुनिक अमेरिका और कनाडा ने आर्थिक समृद्धि प्राप्त कर ली है। इसके विपरीत तीन शताब्दियों पूर्व स्पेन और उत्तरी अमेरिका में उपनिवेश के लिए यूरोपवासियों के आगमन से पूर्व वे आर्थिक समृद्धि प्राप्त करने में असफल रहे—यद्यपि, शायद स्पेन सभी औपनिवेशिक साम्राज्यों में सबसे अधिक लोभी था और एक समय यूरोपीय इतिहास में उसने उपनिवेशों और आश्रित देशों का आर्थिक शोषण करके अद्वितीय समृद्धि का आनंद उठाया था। उत्तरी अमेरिका के पास विशाल प्राकृतिक संसाधन थे। इसलिए अनुकूल राजनीतिक परिस्थितियों और प्रचुर प्राकृतिक संसाधनों अथवा प्रति व्यक्ति पूंजी की उपलब्धता के अतिरिक्त कुछ अन्य ऐसी चीजें हैं, जो किसी देश को आर्थिक रूप से विकसित करने के लिए आवश्यक होती हैं, और वह अपेक्षित गुणवत्ता का मानव कारक है।[2] अंततोगत्वा हमारे आर्थिक पिछड़ेपन का कारण ब्रिटिश आधिपत्य में ही निहित नहीं है, बावजूद इसके कि उन्होंने हमारे देश को आर्थिक एवम राजनीतिक रूप से क्षतविक्षत किया। यह हमारे देश के भाग्य अथवा प्रकृति की कंजूसी में

[2] तीन कारक हैं—ऐतिहासिक, भौगोलिक और सामाजिक। इन तीन कारकों ने स्पष्ट रूप से इन समुदायों के जीवन के दृष्टिकोण को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वे देश के उन प्रदेशों में रहते हैं; (क) जिन्होंन अधिकांशतया विदेशी आक्रमणों का सामना किया है; (ख) जहां तुलनात्मक रूप से कम वर्षा होती है और इसलिए अनेक वार दुर्भिक्षों से पीड़ित हुए हैं; और (ग) जहां देश में सबसे अधिक क्रांतिकारी, सामाजिक, धार्मिक आंदोलन हुए हैं; यथा आर्यसमाज ने एक ऐसा स्वरूप बदला है तथा अधिकांशतया जनता के मस्तिष्क को प्रभावित किया है। विशेषकर पंजाब को एक अन्य सम्बंध में भी सौभाग्य प्राप्त हुआ है। सिक्ख गुरु तेगबहादुर, गुरु गोविंदसिंह और गुरु अर्जुनदेव ऐसे उदाहरण हैं, जिन्होंने जनता को उद्यम की भावना से प्रेरित किया और अत्याचार सहित सभी कठिनाइयों का सामना करने के लिए उनकी इच्छाशक्ति को जागृत किया है।

भी निहित नहीं है बल्कि यह आर्थिक पिछड़ापन केवल हमारे देशवासियों के अवगुणों के कारण है। डब्ल्यू० एस० वॉयटिंस्की ने कहा है:

> "आधुनिक देशों में समृद्धि का आधार पूंजी का संचयन नहीं है बल्कि यह समृद्धि जनता पर आधारित है यथा,—मोटे तौर पर इसे श्रम शक्ति कह सकते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जर्मनी और जापान के अनुभव से इस बात की पुष्टि हो जाती है। इन देशों के शहर, बन्दरगाह, रेल—सड़कें, पुल, कारखाने और बिजलीघर आदि, जो आधी शताब्दी के कठोर परिश्रम से बनाए गए थे और वे सब मलबे तथा राख में बदल दिए गए थे। खंडहरों में अर्धनग्न लोग ही बचे थे। उनके पास केवल उनके हाथ, दिमाग—सामूहिक रचनात्मक कार्य के लिए प्रशिक्षित—और मनोबल ही काफी था। चारित्रिक गुणों के कारण उन लोगों ने पुनर्निर्माण किया। एक दशाब्दी ही में वे आर्थिक रूप से इतने सशक्त हो गए, जितने वे युद्ध पूर्व भी नहीं थे।" (देखिए, 'इंडिया' द अवेकनिंग जाइन्ट, हार्पर एण्ड ब्रदर्स, न्यूयार्क १९५७, पृष्ठ १८५—८६)

यह लगभग स्वयंसिद्ध सत्य है कि प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता और मात्रा ईश्वर या प्रकृति की देन हैं और ये लगभग मानवीय नियंत्रण के परे हैं फिर भी लोगों (संख्या सहित) की गुणवत्ता या उत्कृष्टता की मात्रा का निर्माण बहुत कुछ लोगों पर ही निर्भर करती है। जापान के उदाहरण से हमें यह विदित होगा कि अधिकांश मात्रा में प्राकृतिक संसाधनों की मात्रा की कमी को काफी हद तक श्रमजीवी जनसंख्या की गुणवत्ता से पूरा किया जा सकता है या उसकी कमी की क्षतिपूर्ति की जा सकती है। ऐतिहासिक कारकों के अलावा यह गुणवत्ता लोगों की सामाजिक और आर्थिक अभिवृत्तियों पर आधारित है और यह गुणवत्ता सरकार द्वारा उपलब्ध उनके स्वास्थ्य और शिक्षा तथा नेतृत्व पर भी आधारित है।

देश के पश्चिमी भागों में रहने वाले सिंधी, गुजराती, मारवाड़ी और पंजाबी समुदायों को छोड़कर—और दूसरी ओर जापान के लोगों से कहीं भिन्न—हमारे देश के लोग आरामतलब हैं लेकिन महत्त्वाकांक्षी नहीं हैं; वे अपने आप अपनी आर्थिक—सामाजिक स्थिति में सुधार करने के लिए स्वयं कठोर परिश्रम के लिए तैयार नहीं होते। वे नवीन विचारों और तरीकों को अपनाने, पहल करने और अस्थायी रूप से हार या हानि उठाने में भयभीत हो जाते हैं।

लोगों के धार्मिक विश्वास और परम्पराएं ही इस सम्बंध में सबसे अधिक संगत हैं, जो जीवन के प्रति लोगों की अभिवृत्ति को निर्धारित

करती हैं। सभी प्रकार के मानवीय क्रिया–कलाप, चाहे वे सामाजिक व आर्थिक हों, मस्तिष्क में जन्म लेते हैं। इसलिए समाज की आर्थिक दशाएं अन्ततोगत्वा समाज के सदस्यों की मानसिक अभिवृत्तियों अथवा उनकी प्रक्रियाओं में खोजी जा सकती हैं।

इसी प्रकार किसी भी देश की समृद्धि या गरीबी उस देश के निवासियों की मानसिकता से जानी जा सकती है। यदि आज हम गरीब और आर्थिक रूप से पिछड़े समाज के सदस्य हैं, तो इसका कारण हमारी दोषपूर्ण मानसिक अभिवृत्तियों में खोजा जा सकता है। उपसिद्धांत के रूप में, यदि अब हम अपने देश को समद्धिशाली बनाना चाहें, तो हमें अपने देश के लोगों की वर्तमान सामाजिक और आर्थिक अभिवृत्तियों में परिवर्तन करना होगा। केवल इसी परिवर्तन के बाद अर्थात् हम आर्थिक प्रगति की इच्छा अपने मन में जागृत करें और यह इच्छा ऐसी हो कि राष्ट्रों के बीच में हमारा भी वही स्थान हो, जो कभी हमारे पुरखों का था, तो हम इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधन प्राप्त करना प्रारम्भ कर देंगे अर्थात् हम आवश्यक कौशल अथवा ज्ञान और आवश्यक स्वास्थ्य अथवा शारीरिक बल की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करेंगे और कठोर परिश्रम के लिए आवश्यक इच्छा–शक्ति जागृत करेंगे। यदि इस रूप में देखा जाए, तो आर्थिक विकास अनन्य रूप से–शायद प्राथमिक रूप से भी, केवल आर्थिक प्रगति ही नहीं हैः इस आर्थिक प्रगति में भी गहन सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन निहित है। यह परिवर्तन मूल्यों, आदतों, ज्ञान, अभिवृत्तियों, सामाजिक आदर्श और महत्त्वाकांक्षाओं में निहित है। यह परिवर्तन अथवा सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक सुधार उस कीमत का एक भाग है, जो हमें उस दलदल से निकलने के लिए चुकाना होगा, जिसमें कि आज हम फंसे हुए हैं। पर्याप्त प्राकृतिक संसाधनों के अनुपात में मानव शक्ति या कृषि उपलब्धता की बेशी, ये अकेले ही आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त नहीं हैं, जिनके बारे में पुस्तक में काफी कुछ कहा जा चुका है।

कई शताब्दियों तक हिन्दू धर्म ने, जैसाकि कतिपय सम्प्रदायों ने व्याख्या की है, वैयक्तिक और निष्क्रिय प्रकार के जीवन पर गहरा विश्वास व्यक्त किया है और भौतिक संसार की अवहेलना करने के लिए घोर तर्क प्रस्तुत किया है। इन लोगों के लिए विश्व कुछ भी नहीं है बल्कि माया है अर्थात् कपोल–कल्पना है। इसलिए अन्य सांसारिकता पर विशेष बल दिया गया है और कठोर कार्य तथा सम्पत्ति के संचयन को बहुत ही कम ठोस प्रोत्साहन दिया गया है। सादा अथवा आडम्बरहीन जीवन को निम्न कोटि के जीवन के साथ भ्रम में डाल दिया गया है।

हममें से अधिकांश लोग अपने भाग्य या किस्मत से संतुष्ट हो जाते

हैं और यह विश्वास नहीं करते कि वे स्वयं ही अपने भाग्य के निर्माता हैं। अपने प्रयत्नों पर विश्वास करने के बजाय वे बाहर की सहायता की बाट जोहते हैं—चाहे वह सहायता परमात्मा से मिले अथवा सरकार से। इसका परिणाम यह हुआ है कि हमारा समाज अत्यधिक भाग्यवादी हो गया, जिसके फलस्वरूप गरीबी बढ़ी हैं।

हम लोग काम से बचना चाहते हैं। यह स्थिति निम्नांकित तालिका से स्पष्ट है। इस तालिका में १६ देशों की जनसंख्या की तुलना में कार्यकारी दल की प्रतिशतता दिखाई गई है।

तालिका

पुरुष—महिला के हिसाब से क्रियाशील जनसंख्या और कुल जनसंख्या में इनकी प्रतिशतता—चुनिंदा देश

(१९७१ अथवा आसपास)

क्र० सं०	देश	आर्थिक रूप से क्रियाशील जनसंख्या ('०००) पुरुष	महिलाएं	योग
१	२	३	४	५
१.	संयुक्त अरब गणराज्य	८७२८	५३९	९२६७
२.	कनाडा	(४९.३)	(३.१)	(२६.४)
		५७६०	३०५३	८८१३
		(५३.३)	(२८.४)	(४०.९)
३.	अमेरिका	५८३९७	३८५२०	९६९१७
		(५५.९)	(३५)	(४५.२)
४.	भारत	१४९१४६	३१३३९	१,८०,४८५
		(५२.५)	(११.९)	(३२.९)
५.	जापान	३३६८०	२०१००	५३७८०
		(६०.६)	(३५.१)	(४७.७)
६.	पाकिस्तान	१९५९५	१४४०	२००३५
		(५२.१)	(४.३)	(५९.५)
७.	चेकोस्लोवाकिया	३८७०	३११३	६९८३
		(५६.४)	(४२.३)	(४८.७)
८.	फ्रांस	१४१४६	७९८८	२२१३४
		(५४.६)	(२९.६)	(४२.९)
९.	जर्मनी (पश्चिमी)	१७०७५	९५३५	२६६१०

क्र० सं०	देश	आर्थिक रूप से क्रियाशील जनसंख्या ('०००) पुरुष	महिलाएं	योग
१	२	३	४	५
		(५९.२)	(३०.०)	(४३.९)
१०.	पोलैंड	९४२४	८०८२	१७५०७
		(५७.८)	(४६.७)	(५२.०)
११.	स्विट्जरलैंड	१९७३	१०२२	२९९६
		(६३.९)	(३२.१)	(४७.८)
१२.	अमेरिका	१६३२९	९३८७	२५७१५
		(६०.६)	(३२.१)	(४६.३)
१३.	यूगोस्लाविया	५६८६	३२०३	८८९०
		(५६.४)	(३०.७)	(४३.३)
१४.	आस्ट्रेलिया	३६४०	१६९१	५३३०
		(५६.८)	(२६.७)	(४१.८)
१५.	न्यूजीलैंड	८६२	४१५	१२७६
		(५५.३)	(२६.३)	(४०.७)
१६.	रूस	५७९९०	५९०३७	११७०२८
		(५२.१)	(४५.३)	(४८.४)

स्रोतः अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (इयर बुक आफ लेबर स्टैटिस्टिक्स), १९७७

इस सम्बंध में राजनीतिक स्वतंत्रता के आगमन से किसी प्रकार का कोई अन्तर विदित नहीं होता। यह सही है कि हमारे देश के लोगों की वर्तमान गरीबी और इसके कारण—प्राकृतिक आपदाओं का सामना करने की हमारी अक्षमता, जिसमें रोग और निरक्षरता शामिल है—काफी हद तक भाग्यवाद के लिए उत्तरदायी हैं; और पहल करने की कमी या यों कहिए कि अपने ही प्रयत्नों द्वारा अपनी आर्थिक स्थितियों में सुधार करने की अन्यमनस्कता भी है। हमारे धार्मिक विश्वासों और परम्पराओं ने भी इस अभिवृत्ति को पनपने देने में किसी अन्य कारक की अपेक्षा पहले ही काफी बड़ी भूमिका निभाई है।

भाग्यवाद को समाप्त करना ही होगा। हमारे समाज के नेताओं का इस सम्बंध में विशेष दायित्व है। लोगों को यह महसूस कराना होगा कि हमारा भौतिक वातावरण अपरिवर्तनीय कारक नहीं है, बल्कि यह एक व्यवस्थित संसार है, जिसे परिवर्तित करके बनाया जा सकता है। भगवत्कृपा का ऐसा विधान नहीं है कि हमारे बच्चे अभाव और दीनता में जीवित रहें अथवा नासमझ बने रहें। मानवीय इच्छा—शक्ति स्वतंत्र है

और यदि कोई चाहे, तो वह अपने वर्तमान जीवन के पुरुषार्थ से प्रारब्ध के प्रभावों को नकार सकता है या अधिकांशतया उन्हें नकार सकता है। कर्म–सिद्धान्त की शिक्षा के अन्तर्गत भाग्यवाद अथवा पूर्ण नियतिवाद का कोई स्थान नहीं है। मानव केवल प्राणी ही नहीं है बल्कि परिस्थितियों का निर्माता भी है। मानवीय प्रयत्न द्वारा प्रगति का विचार हिन्दू विचारधारा के लिए केवल स्वदेशी ही नहीं है बल्कि वास्तव में उसकी शिक्षा का एक भाग है।

आर्य समाज के महान संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती सामाजिक युग–चेतना के प्रवर्तक थे और उन्होंने भारत की विचारधारा में काफी परिवर्तन किए। उन्होंने हिन्दुओं को यह याद दिलाया कि आत्मा अमर है और कर्म भाग्य का विधाता होता है। उन्होंने 'सत्यार्थप्रकाश' में लिखा है, "एक सशक्त और क्रियाशील जीवन की मान्यता भाग्य के फैसले की स्वीकृति की अपेक्षा कहीं अधिक है। भाग्य कर्मों का फल है। कर्म भाग्य के निर्माता होते हैं। भलाई के कार्य उदासीन त्याग की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ हैं। आत्मा स्वतंत्र कर्ता है और उसे जैसा भी पसंद हो, वह मुक्त भाव से कर लेती है लेकिन यह बात परमात्मा की अनुकम्पा पर ही आधारित है कि वह अपने कार्य के परिणाम का सुख भोगे।"

डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने इसी विचार को इस प्रकार व्यक्त किया है:

> जीवन के खेल के पत्ते हमें दे दिए जाते हैं। हम स्वयं उनका चयन नहीं करते। वे हमारे पूर्व जन्म के कर्मों में खोजे जा सकते हैं लेकिन हम इच्छानुसार उनका उपयोग कर सकते हैं और हम जैसा चाहें. वैसा जीवन बिता लेते हैं और जिस प्रकार हम खेलते हैं, वैसे ही, हम या तो जीत जाते हैं या हार जाते हैं; और इसमें स्वतंत्रता है।

धर्म के बाद रीति–रिवाज प्रत्येक समाज के लिए सबसे सशक्त एकाकी बल है। जनता का आचरण अथवा व्यवहार अधिकांशतया उसकी सामाजिक परम्परा या सांस्कृतिक विरासत से अनुशासित होता है और यह विरासत एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को लगातार मिलती रहती है अथवा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में प्रेषित होती है, जिसमें सामाजिक रूप से संचित उन व्यक्तियों के अनुभव, कौशल, न्याय, और विवेक होते हैं, जो दिवंगत हो गए हैं।

फिर भी, हमारे रीति–रिवाज या सांस्कृतिक परम्पराएं, जैसी कि अन्य देशों में भी होती हैं, न तो सभी अच्छी हैं और न सभी अमिश्रित रूप से अच्छी हैं। यद्यपि हठीली रूढ़िवादिता ने बहुमूल्य मूल्यों, यथा–चरित्र और

आचरण की गुणवत्ता के परिरक्षण के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया है, जिनसे हमारे समाज को शक्ति, स्थायित्व और सुरुचि प्राप्त हुई हैं अन्यथा समाज ही लुप्त हो जाता, फिर भी इसने परम्पराओं को भी स्थायी बना दिया है, जो इतना लाभकारी नहीं है। उनमें अंधविश्वास, बुरी आदतें और देहाती तरीके शामिल किए जाते हैं, जो प्रायः कतिपय भटकी हुई पीढ़ियों की ही देन हैं अथवा ऐसे नियमों के परिणाम हैं, जो किसी समय अच्छे थे लेकिन बाद में वे उपयुक्त नहीं रहे। इस प्रकार की परम्पराओं ने जनता के जीवन की प्रक्रिया को काफी बोझिल बना दिया है और उसकी प्रगति को अवरुद्ध कर दिया है।

चौधरी चरण सिंह द्वारा रचित कृतियां

शिष्टाचार, १९४१. (२०१ पृष्ट)

हाउ टू एबोलिश जमींदारीः ह्विच एल्टरनेटिव सिस्टम टू एडाप्ट। (ज़मींदारी उन्मूलन कैसे करें: किस वैकल्पिक प्रणाली को अपनाएं) १९४७. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, संयुक्त प्रांत।

एबोलिशन ऑफ ज़मींदारीः टू अल्टरनेटिव्ज। (जमींदारी उन्मूलनः दो विकल्प) १९४७. किताबिस्तान, इलाहाबाद. (२६३ पृष्ट)

एबोलिशन ऑफ जमींदारी इन यू० पी०: क्रिटिक अंसरड। (उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलनः आलोचकों को जवाब) १९४९. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, संयुक्त प्रांत।

व्हितहर कोआपरेटिव फार्मिंग? (सामूहिक खेती की दिशा?) १९५६. इलाहाबादः सुपरिन्टेन्डेन्ट प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, उत्तर प्रदेश।

एग्रेरियन रिवोल्यूशन इन उत्तर प्रदेश। (उत्तर प्रदेश में कृषि क्रांति) १९५७. प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, गवर्नमेंट ऑफ उत्तर प्रदेश १९५८ लखनऊ, सुपरिन्टेन्डेन्ट, प्रिंटिंग एंड स्टेशनरी, उत्तर प्रदेश। (६६ पृष्ट)

जॉइंट फार्मिंग एक्स–रैडः द प्रॉब्लम एंड इट्स सोल्यूशन। (संयुक्त खेतीः समस्या और समाधान) १९५९. किताबिस्तान, इलाहाबाद. (३२२ पृष्ट)

इण्डियाज पॉवर्टी एण्ड इट्स सोल्यूशन। (भारत की गरीबी और उसका समाधान) १९६४. एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई। (५२७ पृष्ट)

इण्डियन इकोनॉमिक पॉलिसीः दि गांधियन ब्लूप्रिंट। (भारत की अर्थनीतिः एक गांधीवादी रूपरेखा) १९७८. विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (१२७ पृष्ट)

इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डियाः इट्स कॉज़ एण्ड क्योर। (भारत की भयावह आर्थिक स्तिथिः कारन एवं निदान) १९८१. नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (५९८ पृष्ट)

लैण्ड रिफॉर्म्स इन यू० पी० एण्ड दि कुलक्स। (उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार एवं कुलक वर्ग) १९८६. विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली। (२२० पृष्ट)

'विशिष्ट रचनाएंः चौधरी चरण सिंह' भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री चरण सिंह द्वारा १९३३ और १९८५ के बीच लिखित २२ महत्वपूर्ण लेखों और भाषणों का संग्रह है। इस पुस्तक के अध्ययन से आज का पाठक वर्ग जान सकेगा कि मौजूदा समय की चुनौतियां न तो नई हैं और न ही समाधानहीन। इनसे निपटने के लिए एक मन–सोच अथवा जिगरा चाहिए, जो निश्चय ही धरा–पुत्र चरण सिंह में था। उनका लेखन उस प्रकाशस्तंभ की तरह है जो समुद्र में भटके हुए जहाजों को किनारे तक आने का रास्ता दिखाता है। उनके लेखन के आलोक में हम मौजूदा चुनौतियों को सही परिप्रेक्ष्य में न केवल समझ सकते हैं अपितु उनका समाधान भी पा सकते हैं। इन लेखों में उनकी राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि के दर्शन होते हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इन लेखों को सामाजिक लेखन, आर्थिक लेखन, राजनीतिक लेखन एवं उपसंहार – चार खण्डों में विभाजित किया गया है।

चौधरी चरण सिंह की अध्यात्मिक अंतश्चेतना और राजनीतिक मेधा महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं महात्मा गांधी से अनुप्रेरित रही, तो सरदार पटेल उनके नायक रहे। इन विभूतियों पर चौधरी साहब ने अपने विचार लेखों में प्रस्तुत किये हैं। जाति–प्रथा, आरक्षण, जनसंख्या नियंत्रण, राष्ट्रभाषा जैसे सामाजिक मुद्दों के साथ ही शिष्टाचार जैसे विरल विषय पर भी दो लेख **खण्ड एकः सामाजिक लेखन** में दिये गये हैं।

चौधरी साहब भारत की उन्नति का मूल आधार कृषि, हथकरघा और ग्रामीण भारत को मानते थे। उनकी दृष्टि में ग्रामीण भारत ही वह नियामक तत्व रहा जिसे प्रमुखता देकर देश को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया जा सकता है, साथ ही बेरोजगारी जैसी विकट समस्या को भी दूर किया जा सकता है। उत्तर प्रदेश में भूमि सम्बंधी सुधारों और जमींदारी समाप्त करने को लेकर चौधरी चरण सिंह पर धनी किसानों के पक्षधर होने के आरोप विरोधियों ने लगाये। उनका उन्होंने बेहद तार्किक ढंग से उत्तर दिया है। गांव–किसान और खेती के प्रति उपेक्षापूर्ण नीतियां एवं काले धन की समस्या जैसे तथा उपरोक्त विषयों पर केन्द्रित लेख **खण्ड दोः आर्थिक लेखन** के अन्तर्गत दिये गये हैं।

खण्ड तीनः राजनीतिक लेखन के अन्तर्गत भारत की लम्बी गुलामी के मूल कारणों का विश्लेषण, गांधी–चिंतन, देश में पहली गैर–कांग्रेसी जनता पार्टी की सरकार की आधारभूत नीतियां, देश विख्यात माया त्यागी कांड का समाजशास्त्रीय विश्लेषण, भाषा आधारित राज्यों के खतरे आदि मुद्दों के अलावा उनके नायक सरदार पटेल की स्मृति पर आधारित लेख हैं। इसी खण्ड में चौधरी साहब के ऐतिहासिक महत्व के दो भाषण भी संकलित हैं, जो लोकशाही पर संकट और राष्ट्रीय विघटन के खतरों के प्रति सचेत करते हैं।

अंतिम **खण्ड चारः उपसंहार** है, जिसमें चौधरी साहब ने राजनीति, समाज नीति और देश से सम्बंधित अधिकतर मुद्दों पर संक्षेप में अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

Charan Singh Archives
www.charansingh.org

मूल्य ₹६६